पुस्तक अंश

बच्चे कैसे सीखते हैं

जॉन होल्ट

अनुवादः सुशील जोशी

चित्र विजय शर्मा

"मुझे लगता है कि ज़्यादातर लोग शिक्षा का अर्थ लगाते हैं कि बच्चों को स्कूल नामक स्थान पर जाने को मजबूर किया जाए, और वहां वह सब कुछ सिखाया जाए जो वे नहीं सीखना चाहते, और यह डर दिखाया जाए कि यदि वे नहीं सीखते तो उनके साथ कुछ बुरा सलूक किया जाएगा। कहने की ज़रूरत नहीं कि ज़्यादातर लोगों को यह खेल बहुत पसन्द नहीं आता और जैसे ही मौका मिलता है वे इसे खेलना बन्द कर देते हैं।"

30 जुलाई, 1961

छोटे बच्चे खेलों को पसंद करते हैं और वे किसी भी चीज़ को खेल बना सकते हैं। आज सुबह लिज़ा अपनी बड़ी बहन नेल के साथ बिस्तर में पड़ी थी। पहले नेल बिस्तर के ऊपर लगी लाइट को बंद कर देती; फिर लिज़ा उसे चालू करते हुए कहती,"बंद मत करना।" बड़ी बहन अपना हाथ लाइट की ओर आहिस्ता-आहिस्ता बढ़ाती। हर बार जब हाथ में हरकत होती तो लिज़ा कहती, "बंद मत करना।" यह सिलसिला काफी देर तक चलता रहता, और आखिर में लाइट बंद हो ही जाती। लिज़ा उसे फिर चालू कर देती और खेल एक बार फिर शुरू हो जाता।

बच्चों के कई सारे खेल यूं ही संयोग से शुरू हो जाते हैं। एक दिन मैं एक पत्रिका लेकर कमरे में आया, उसे मेज़ पर रखा और किसी अन्य काम में लग गया। लिज़ा मेज़ के पास गई, उसने पत्रिका को उठाया और फर्श पर रख दिया। फिर मेरी ओर अर्थपूर्ण ढंग से देखा। मैं वापस गया पत्रिका को उठाया और उसे फिर से मेज़ पर रख दिया। लिज़ा ने उसे फिर वापस नीचे रख दिया। बस, एक उम्दा खेल शुरू हो गया जो काफी समय तक चला।

ऐसे खेलों के पीछे आनन्द, मूर्खता और मस्ती की भावना होनी चाहिए, जैसी कि सारे अच्छे खेलों में होती है। इसमें वह खेल भी शामिल है जिसमें यह खोजने की कोशिश होती है कि यह दुनिया चलती कैसे है, जिस खेल को हम शिक्षा कहते हैं।

> मुझे लगता है कि सभी लोग शिक्षा को इस रूप में नहीं समझते हैं। वे शिक्षा का अर्थ लगाते हैं कि स्कूल नामक स्थान पर जाने को मजबूर किया जाए, और वहां वह सब कुछ सिखाया जाए जो वे नहीं सीखना चाहते, और यह डर दिखाया जाए कि यदि वे नहीं सीखते तो उनके साथ कुछ बुरा सलूक किया जाएगा। कहने की ज़रूरत नहीं कि ज़्यादातर लोगों को यह खेल बहुत पसन्द नहीं आता और जैसे ही मौका मिलता है वे इसे खेलना बन्द कर देते हैं।

बहरहाल यदि संकीर्ण अर्थों में भी लें तो भी लिज़ा के साथ जो भी

खेल मैंने खेले, वे शैक्षिक हैं। इनसे बच्चे को कार्य-कारण का, एक चीज़ के बाद दूसरी के आने का गहरा अहसास मिलता है। और इनसे बच्चे को यह महसूस करने में भी मदद मिलती है कि अपने आसपास की दुनिया पर कुछ असर डाल सकता है वो खुद . . .। किसी वयस्क के साथ खेल रहे एक बच्चे के लिए यह अहसास कितना स्फूर्तिदायक होता होगा कि कुछ तयशुदा चीज़ें करके वह उस सर्वशक्तिमान दानव से कुछ करवा सकता है, और जब तक चाहे इस सिलसिले को जारी रख सकता है।

एक मर्तबा मैं शिकागो में अपने दोस्त से मिलने गया था। एक सुबह मुझे थोड़ी देर के लिए उनके बच्चों – साढ़े तीन साल की एलिस और दो साल से थोड़े बड़े पैट्रिक को संभालना पड़ा। जिस गली में वे रहते थे वो काफी सुनसान-सी थी। दोनों बच्चे इसके फुटपाथ पर खेलने के आदी थे। सो मैंने उनसे कह दिया कि वे वहां खेल सकते हैं मगर आंखों से ओझल न हों। लेकिन जल्द ही वे ओझल हो गए और मुझे उन्हें पकड़कर लाना पड़ा। वे विरोध करते रहे, चिल्लपों मचाते रहे, वे उबल रहे थे। उन्होंने कहा कि मैं बुरा हूं और वे मम्मी से मेरी शिकायत करेंगे। मैंने उनसे कहा कि ज़रूर करो। पैट्रिक ने मुझे बताया कि मम्मी मुझे धौल जमाएंगी, ऐसे. . .। मैंने रोने का नाटक किया। यह खेल बच्चों के साथ सौ फीसदी कारगर होता है और सब बच्चों को यह खेल बहुत प्रिय होता है। छोटे बच्चे मुझे धौल जमाते, मेरी पीठ पर मारते और मैं रोने का नाटक करता। जब मैं रुक जाता तो पैट्रिक कहता कि मैं अभी भी तुम्हें धौल जमा रहा हूं, तो मुझे फिर रोना शुरू करना पड़ता। बीच-बीच में मैं कहता जाता कि मैं अच्छा लड़का हूं। इस पर पैट्रिक कठोरता से कहता, "बुरे लड़के. . ." यह तब तक चलता रहा जब तक कि उन्हें करने को कुछ और न मिल गया। बाद में हमने यह खेल बच्चों के माता-पिता को भी दिखाया।

1 अगस्त, 1961

हाल में लिज़ा ने कुछ उग्र खेल खेलना शुरू कर दिया है। वह अपने दांत दिखाते हुए, गुर्राती हुई, दहाड़ मारकर मेरी तरफ

लपकती है। मैं डरने का नाटक करता हूं और कुर्सी के पीछे दुबक जाता हूं। यह थोड़ी देर चलता है। इससे और उसकी अन्य गतिविधियों से ऐसा लगता है कि वह अपने अन्दर एक 'मैं' का अनुभव कर रही है जो ताकतवर हो रहा है, चीज़ें कर रहा है, चीज़ों की मांग कर रहा है। जिस खेल में यह 'मैं' ज़्यादा ताकतवर दिखे वह एक अच्छा खेल बन जाता है। अधिकांश समय वह यह बखूबी जानती है कि वह 'मैं' सचमुच कितना अशक्त है।

कभी-कभी वह एक छड़ी से कुर्सी की बैठक पर मारती है और मुंह से फटाक की आवाज़ निकालती है। कुर्सी पर चोट करते वक्त वह साथ में आंखें मीच लेती है, गोया कि उस चोट की शक्ति से वह खुद थोड़ी डर गई हो। इसे देखकर मुझे एक नौ वर्षीय लड़के की याद आई। उसने जब फुटबॉल खेलना शुरू किया था तो वह जब भी गेंद को किक मारता तो साथ में मुंह से ऐसी ही विस्फोटक आवाज़ निकालता था। मेरा ख्याल था कि वह अनजाने में ही ऐसा करता था। गौर करने लायक बात यह है कि न तो वह बड़े डीलडौल का था और न ही उसका शरीर एथलेटिक था और वह गेंद को बहुत ज़ोर से किक नहीं मार पाता था; यदि वह ज़ोरदार किक मार पाता तो विस्फोटक आवाज़ की ज़रूरत भी न पड़ती।

सारी उग्रता, घमंड और जिद्दी आत्म निर्भरता एक तरफ मगर लिज़ा दिल से बहुत दयालु और परोपकारी है। उसका एक पसन्दीदा खेल है 'तुम नहीं कर सकते'। कई मर्तबा इस खेल में मैं दरवाज़े के बाहर होता हूं और वह अन्दर। वह कहती है 'अन्दर नहीं आ सकते'। मैं धीरे-धीरे दरवाज़े को खींचना शुरू करता हूं। वह दूसरी ओर से पूरी ताकत से खींचती है। थोड़ी देर बाद मैं छोड़ देता हूं मानो थक गया हूं। दरवाजा खटाक से बन्द हो जाता है। वह मेरी ओर एक विजयी नज़र उछालती है और फिर से कहती है 'तुम अन्दर नहीं आ सकते'। मैं एक बार फिर दरवाज़ा खोलने की कोशिश करता हूं, वह फिर से प्रतिरोध करती है और अन्ततः मैं छोड़कर दरवाज़े को बन्द हो जाने देता हूं। ऐसा पांच-छः बार होता है। परन्तु अंत में हमेशा वह बहुत प्रेम से मुझे अन्दर आने देती है। कहती है, 'जॉन, अन्दर आ जाओ।' एक दिन सुबह-सुबह उसे अपनी बहन से बात करते सुनकर मैं अन्दर चला गया। उसने मेरी

तरफ चुलबली नज़र डाली और कहा "चले जाओ।" मैंने पूछा, "क्यों?" तो उसने कहा, "क्यों क्या? तुम्हें जाना होगा।" मैंने एक बार फिर कहा कि मैं जाना नहीं चाहता। "तुम्हें जाना चाहिए।" यह जाना होगा से ज़्यादा बल रखता है। मैंने एक बार फिर कहा कि मैं जाना नहीं चाहता। तब एक अजीब-सी बात हुई – उसने कहा, "तुम नहीं रुक सकते।" अब उसने उत्तरों का वह पैटर्न अपना लिया था, जिसका उपयोग वह कई परिस्थितियों में करती है। लगभग इसी समय मैं कमरे से बाहर आ गया। एक क्षण बाद ही मैं वापस कमरे में था और बस, खेल शुरू हो गया। दो चार बार खेलने के बाद उसने कहा, "बाहर मत जाओ।"

हम वयस्कों को दो-चार बार जीतने देने में बच्चों को कोई ऐतराज़ नहीं होता बशर्त्ते कि हम उन्हें भी कुछ अंक स्कोर करने दें। परन्तु हममें से कई लोग, मसलन फुटबाल के कुछ कोच, मात्र जीतकर संतुष्ट नहीं होते; हमें तो विशाल स्कोर की हवस होती है।

2 अगस्त 1961

एक दिन हम कार्ल्सबैड कैवर्न गए। एक अजीब-सी खूबसूरत जगह है। वहां पहुंचने के लिए हमें कई घण्टे कार में सफर करना पड़ा। रास्ते में हमने खेल खेले। रेडियो चल रहा था। मैंने संगीत की लय के साथ ताली बजाना शुरू कर दिया। लिज़ा देख रही थी। उसने भी वैसा ही किया। फिर मैंने एक हथेली से दूसरी मुट्ठी पर ताली देना शुरू कर दिया। उसने थोड़ी देर देखा और फिर दोनों हाथों की मुट्ठी बनाकर ताली बजाने लगी। थोड़ी देर ऐसा करने के बाद उसने फिर से देखा। वह समझ गई कि वह सही नहीं कर रही है, और जल्दी ही हूबहू वही करने लगी जो मैं कर रहा था। इसमें से खेलों का एक पूरा काफिला निकल पड़ा। मैंने अपनी हथेली से सिर पर ताली बजाई, उसने भी वही किया। मैंने अपने हाथ से पेट पर ताली बजाई, उसने भी किया। मैं अपने खेल और पेचीदा बनाता गया। एक हाथ से सिर पर और दूसरे से पेट पर ताली बजाने लगा, या एक हाथ से सिर पर ताली बजाते हुए दूसरे हाथ से कोहनी को पकड़ लिया वगैरह, वगैरह। दिलचस्प बात यह थी कि मैं जो भी

करता, वह उसकी नकल उतार देती थी। हर बार वह जल्दी से कुछ करना शुरू कर देती। फिर करते-करते वह जांचती कि मैं जो कर रहा हूं और वह जो कर रही है उनमें तालमेल है या नहीं। फिर वह अपनी क्रिया में परिवर्तन करती, फिर से जांचती, और ऐसा तब तक करती जाती जब तक कि वह संतुष्ट न हो जाए कि हम दोनों एक-सी हरकत ही कर रहे हैं। उसे ऐसा करते देखकर मेरे ज़ेहन में दो बातें कौंधी। पहली तो यह कि कुछ भी शुरू करते वक्त उसे यह ख्याल परेशान नहीं करता कि उसे पूरा सही ही करना है। वह तैयार थी कि कुछ करके शुरुआत की जाए और फिर सोचा जाए कि इसे ठीक कैसे करें। तैयार ही नहीं बल्कि वह तो उत्सुक थी शुरुआत करने के लिए। दूसरी बात कि वह एक त्रुटिपूर्ण नकल से संतुष्ट नहीं होती थी अपितु तब तक देख-देखकर तुलना करती जाती जब तक कि वह संतुष्ट न हो जाए कि वह सही कर रही है। और लगभग हर बार वह ऐसा कर पाती थी।

कोई बड़ा बच्चा शायद इस खेल को थोड़ा अलग ढंग से खेलेगा और शायद पहली बार में ही सही नकल उतार देगा। वह यह नकल वास्तव में करने से पहले, मन में करके जांच सकता है कि क्या वह सही कर रहा है? या वह मेरी हरकत (क्रिया) को शब्दों में व्यक्त करने के बाद अपनी हरकत को उन शब्दों के अनुरूप कर सकता है। परन्तु बहुत छोटे बच्चे, कम से कम लिज़ा तो इस तरह काम करती नहीं दिखती। वे कल्पना में कोई क्रिया करके उसे वहीं ठीक नहीं कर सकते। उन्हें तो नकल, तुलना और त्रुटिसुधार, सब कुछ ठोस या शारीरिक स्तर पर ही करना होता है, और तब तक करते जाना होता है जब तक कि ठीक न हो जाए।

एक अर्थ में – दरअसल कई अर्थों में से एक में – लिज़ा स्कूल के कई दस वर्षीय असफल बच्चों से अलग है। वह काम को सही ढंग से करना चाहती है और जब तक न कर ले तब तक उससे चिपकी रहती है। दूसरी ओर वे बच्चे तो बस चाहते हैं कि किसी तरह खत्म करके छुटकारा पाएं। लगता है बहुत छोटे बच्चों में वह चीज़ होती है जिसे कारीगरी की नैसर्गिक प्रवृत्ति कह सकते हैं। हम इसे देख नहीं पाते क्योंकि वे अकुशल होते हैं और उनकी सामग्री अपरिमार्जित होती है। परन्तु कभी यह देखिए कि कोई छोटा बच्चा कितने प्रेम से

मिट्टी की रोटी बनाता है और हौले-हौले थपथपा कर रेत को आकार देता है। उनकी कोशिश होती है कि इसे अच्छे से अच्छा बनाएं – किसी और को खुश करने के लिए नहीं बल्कि अपने आपको संतुष्ट करने के लिए।

3 अगस्त 1961

लिज़ा को देखकर मुझे प्रायः बिल हल की वह कहानी याद आ जाती है जिसमें छः साल का पहली कक्षा में पढ़ने वाला एक बच्चा यह सुनकर रो पड़ता है कि की Once की स्पेलिंग O-N-C-E होती है। जो बात मुझे उलझन में डालती है, वह यह है कि क्यों छः वर्षीय बच्चे, इस तरह की गड़बड़ियों व विरोधाभासों को लेकर कहीं ज़्यादा व्यग्र हो जाते हैं। लिज़ा दिन भर ऐसी बातें सुनती है जो उसके लिए कोई मायने नहीं रखती, मगर वह चिंतित नज़र नहीं आती। वह अनिश्चितताओं के बीच इतनी सहजता से रहती और विचरती है जैसे कि पानी में मछली। कब और क्यों बच्चों में निश्चितता की चाह उत्पन्न होती है?

ऐसा लगता नहीं कि बच्चे डरे हुए पैदा होते हैं। हां, कुछ चीज़ें ज़रूर हैं जिनसे वे नैसर्गिक रूप से डरते हैं, जैसे ऊंची आवाज़ें या सहारे का अभाव। हालांकि कई बच्चों को यह बहुत अच्छा लगता है कि आप उन्हें हवा में उछालें या गुलाटें खिलाएं। ऐसा लगता है कि बच्चे अपने ज़्यादातर डर अपने बड़ों से अर्जित करते हैं।

मसलन लिज़ा कभी कीड़ों से नहीं डरती थी। जैसे ही उसे कोई रेंगती हुई या उड़ती हुई चीज़ दिखती वह उसे पकड़कर देखना चाहती थी। एक दिन उसकी बड़ी बहन से मिलने एक दस वर्षीय सहेली आई। लिज़ा दोनों बड़ी लड़कियों के साथ कमरे में थी, तभी सहेली को एक कोने में मकड़ी दिखाई पड़ी। वह ज़ोर-ज़ोर से चीखने लगी। उसे कमरे से बाहर ले जाया गया और मकड़ी को मार डाला गया। तब कहीं जाकर वह चुप हुई। उसके बाद से लिज़ा हर तरह के कीड़ों, मक्खी, दीमक, केंचुए सभी से डरने लगी। वह चीखती तो नहीं, बस उनसे दूर हट जाती है और उनसे कोई मतलब नहीं रखना चाहती। दुनिया के बारे में उसकी जिज्ञासा और

दुनिया में उसके विश्वास का एक अंश सो गया। पता नहीं अब यह कब जगेगा।

अधिकतर डर जो बच्चे अर्जित करते हैं वह ज़्यादा सूक्ष्म किस्म का होता है। वे इसे टुकड़े-टुकड़े में, थोड़ी-थोड़ी खुराक में ग्रहण करते हैं। एक दिन लिज़ा पोर्टेबल इलेक्ट्रिक टाइप राइटर से खेल रही थी। वह इसे बन्द चालू कर लेती है और कैरिज रिटर्न को चला लेती है। टाइपिंग करते-करते अचानक उसकी इच्छा हुई कि दोनों हाथों से बटनों को दबाया जाए। कई सारी कुंजियां उछली और उलझ गईं। वह कुंजीपटल पर झुकी और उन्हें पीछे खींचा। मुझे लगा कि अगर अक्षर कुंजियों को पीछे खींचते वक्त उसने कुंजीपटल का एकाध बटन दबा दिया तो कोई अक्षर कुंजी उछलेगी और उसकी उंगली में चोट लग जाएगी। मुझे यह भी डर था कि अक्षर कुंजियों को खींचते वक्त कहीं वह एकाध को मोड़ न दे। लिहाज़ा मैंने उसे एक मर्तबा फिर दिखाया कि मशीन को कैसे बन्द करते हैं और फिर कैसे उलझी हुई कुंजियों को सावधानी से अलग-अलग करते हैं ।

लिज़ा ने कुछ रोचक खोजबीन की। कुंजीपटल के दोनों तरफ एक-एक शिफ्ट लॉक होता है। उसने देखा कि जब आप शिफ्ट बटन को दबाकर छोड़ते हैं तो वह वापस ऊपर आ जाता है। परन्तु जब आप शिफ्ट लॉक को दबाकर छोड़ते हैं तो वह नीचे रहता है और साथ में शिफ्ट बटन भी। तो समस्या यह थी कि इन्हें वापस ऊपर कैसे लाया जाए। खींचने से तो कुछ होता नहीं। थोड़ी देर बाद उसने पता लगा लिया कि यदि वह शिफ्ट बटन को नीचे की ओर दबाए तो शिफ्ट लॉक खुल जाता है और दोनों बटन ऊपर आ जाते हैं। अब उसने दाईं ओर देखा कि क्या वहां भी ऐसा कोई बटन है। मार्जिन रिलीज़ बटन को दबाने से ऐसा कुछ नहीं हुआ जो उसे दिखाई दे। परन्तु टेबुलेटर बटन दबाते ही जब कैरिज पूरा सरककर दूसरी ओर पहुंच गया तो उसके अचरज का ठिकाना न रहा। और ऊपर से घंटी बजी सो अलग। कुछ और इसी तरह के प्रयोग करके उसने शिफ्ट बटन और लॉक बटन की पूरी प्रणाली को खोज निकाला ।

इस पूरे वाकए के दौरान मैं करीब दस फुट दूर एक तरफ खड़ा

था। मैं देखना चाहता था कि वह क्या कर रही है। मेरे मन में यह भी था कि यदि वह फिर से सारे बटन दबाएगी या ऐसा कुछ करेगी जिससे उसे या मशीन को नुकसान हो, तो मशीन बन्द कर दूंगा। मेरा ख्याल था कि मैं चिन्तित नहीं था, मात्र सतर्क था। परन्तु लिज़ा ने मेरी सतर्कता में चिन्ता की कुछ झलक देखी होगी, क्योंकि मशीन के साथ खेलते हुए उसने ऐसा कुछ किया जो उसने छुटपन में कभी नहीं किया था। वह मेरी ओर चेहरे पर एक ऐसा भाव लिए देख रही थी मानो पूछ रही हो, क्या यह करना ठीक है?

बच्चे, खासकर छोटे बच्चे भावनाओं के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं। वे न सिर्फ हमारी भावनाओं को ताड़ लेते हैं, बल्कि उन्हें कई गुना बढ़ा भी लेते हैं। यदि लिज़ा के बड़े भाई या बहन किसी गंभीर तकरार में उलझ जाएं, तो वह रोने लगती है। यदि वे मज़ाक में भी हाथापाई करने लगें, तो वह उन्हें 'बंद करो, बंद करो' चीखते हुए अलग-अलग करने की कोशिश करती है। अन्य परिवारों में मैंने कई बार देखा है कि अभिभावकों की तकरार की वजह से बच्चे कई-कई दिन तक मायूस रहते हैं, हालांकि अभिभावक अपनी तकरार को छिपाने की भरसक कोशिश करते हैं। एक मर्तबा मैं अपने मित्रों के घर गया। उनके बच्चों से मैं अच्छी तरह परिचित था और उनसे बहुत प्रेम भी करता था। उनकी मां और मेरे बीच राजनीति को लेकर बहस हो गई। यह बहस गर्मागरम ज़रूर थी मगर गैर-दोस्ताना नहीं थी।

आमतौर पर हम एक ही पक्ष में रहते हैं। परन्तु बहस की इतनी गर्मागरमी ही बच्चों के लिए थोड़ी ज़्यादा हो गई। वे समझौता कराने की तर्ज पर हमारे इर्द-गिर्द आ गए। शायद उनका ख्याल था कि यदि हमें सोचने को कुछ और मिल जाएगा तो हमारा ध्यान इस झगड़े से हट जाएगा और सब कुछ फिर से खुशनुमा और आनन्दमय हो जाएगा ।

यह सच नहीं है, कम से कम यह सदैव सच नहीं है कि बच्चों में सहानुभूति नहीं होती या वे दूसरों की भावनाओं को महसूस नहीं कर सकते। यह सही है कि वे प्रायः एक-दूसरे के प्रति क्रूर हो जाते हैं, मगर यदि वे किसी ऐसे बच्चे के पास हों जो बुरी तरह घायल

है या मायूस है, तो जल्दी ही वे खुद भी बेचैन हो जाते हैं। कोई बिरला ही बच्चा होगा जो लगातार, सायास क्रूरता का प्रदर्शन करे जैसा कि वयस्क प्रायः करते रहते हैं।

जॉन होल्टः दुनिया के जाने माने शिक्षाविद; काफी घुमक्कड़ प्रवृति के इंसान थे। तमाम लोग शिक्षक का पेशा इसलिए अपनाते हैं क्योंकि उनके पास जीवन में कोई विकल्प नहीं होता। दुनिया में ऐसे खुशनसीब कम ही हैं जो अपने शौक और सपनों के ज़रिए अपनी आजीविका चला पाते हैं। होल्ट उन बिरले लोगों में से थे जिन्होंने अपने शौक को अपना पेशा बनाया।

1964 में उनकी किताब 'हाउ चिल्ड्रन फेल' छपी। इसने शिक्षा जगत में तहलका मचा दिया। यह दरअसल उनकी डायरी का एक अंश थी। इस डायरी में वे बच्चों के करतबों और हरकतों को दर्ज़ करते जाते थे।

1975 में होल्ट स्कूल में बदलाव लाने की बजाए 'स्कूल बंद करो' के पक्षधर हो गए। होम स्कूलिंग को बढ़ावा देने के लिए इसी साल उन्होंने 'ग्रोइंग विदाऊट स्कूलिंग' द्विमासिक पत्रिका की शुरुआत की।

1982 में उनकी बाईं जांघ में ट्यूमर हो गया। 14 सितम्बर को उनका देहांत हो गया।

प्रस्तुत अंक उनकी एक अन्य किताब 'हाउ चिल्ड्रन लर्न' के कुछ अनुवादित अंश हैं।

अनुवादक **सुशील जोशी** पर्यावरण एवं विज्ञान लेखन में स्वतंत्र रूप से सक्रिय हैं; एकलव्य के होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से भी संबद्ध हैं।